ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-7* October-2020
Anthology : The Research

हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श

Female violence in Hindi literature

Paper Submission: 15/10/2020, Date of Acceptance: 25/10/2020, Date of Publication: 26/10/2020

मिनाक्षी झा
अतिथि सहायक प्राध्यपिका,
हिन्दी विभाग,
आर0 डी0 बी0एम कॉलेज,
देवघर, झारखंड, भारत

सारांश

हिन्दी साहित्य में 'स्त्री विमर्श' उन साहित्यों में देखने को मिल जाता है, जहां नारी जीवन की हर एक समस्या और उसके खिलाफ आवाज उठाने की बात कही गई हो। समाज में चित्रित नारी जीवन की त्रासद स्थितियों को साहित्य के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत करने की अनोखी उपलब्धि के तौर पर अगर हम 'स्त्री विमर्श' को देखे तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

यहां स्त्रियों की लड़ाई पुरूषों से नहीं है बल्कि पुरूषवादी मानसिकता और रूढ़ियों से है। वर्षों से होते आए शोषण और दमन के प्रति नारी चेतन में स्त्री विमर्श का बीज बोने में कामयाब रहा है।

In Hindi literature 'Stree Vimarsha' is seen in those literature, where every problem of the woman's life and to speak out against it is said. If we look at 'Stree Vimarsha' as a unique achievement of presenting the tragic conditions of female life depicted in society to the society through literature, then there is nothing surprising in it.

Here, the fight of women is not with men, but with a maleistic mindset and stereotypes. The woman has managed to sow the seeds of female exploitation in the face of exploitation and oppression over the years.

मुख्य शब्द : स्त्री , साहित्य, समाज, समस्या।
Women, literature, society, problem.

प्रस्तावना

स्त्री ईश्वर की अद्भुत सृष्टि है। सदियों से लेकर आज तक हमारे देश में शक्ति पूजा की परंपरा रही है। स्त्री सशक्तिकरण की बात सदियों से चली आ रही है। यही सशक्तिकरण साहित्य के माध्यम से भी व्यक्त होता दिखाई दे रहा है। शोषण और दमन के प्रति चेतना ने स्त्री विमर्श को जन्म दिया स्व के प्रति सजगता और अस्तित्व की चेतना स्त्री विमर्श की मुख्य शक्ति हिन्दी साहित्य में इसे श्रेष्ठता दिलाती है।

अध्ययन का उद्देश्य

कहा जाता है साहित्य समाज का प्रतिबिंब होता है, इसलिए साहित्य में स्त्री विमर्श से हम समाज को एक मजबूत आयाम दे सकते हैं।

भारतीय साहित्य में तो स्त्री विमर्श मध्यकाल से ही प्रारंभ हो चुका था। जहां एक ओर मीराबाई पहली विद्रोहिणी रचनाकार थीं, जिन्होंने न सिर्फ लेखन से बल्कि अपने जीवनशैली से भी स्त्री की रूढ़ छवि को तोड़ा।

सच तो यह है कि जिस स्त्री–सशक्तिकरण की बात इन दिनों की जा रही है, उनका प्रमाण देने वाली अनेक स्त्री–छवियाँ भारतीय साहित्य में पहले से ही विद्यमान हैं। महाभारत, रामायण में वर्णित सावित्री, शकुन्तला, द्रोपदी, सीता जैसी छवियों पर गहराई से विचार करें तो उनमें स्त्री–स्वतंत्रता, अस्मिता, दृढ़ता संपन्न व्यक्तित्व का दर्शन बखूबी हो जाता है। मध्यकाल से आगे बढ़ते है तो रीति काल में स्त्री–विमर्श को लेकर थोडी निराशा मिलती है। वहाँ अधिकांश कवियों ने राजाओं के प्रशस्ति में ही अपनी काव्य योगिता सिद्ध की।

आधुनिककाल में प्रवेश करते ही नवजागरण की शुरूआत हुई। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से लेकर महावीर प्रसाद द्विवेदी ने स्त्री मुक्ति पर साहित्य को समृद्ध किया।

अगर छायावाद में देखा जाए तो जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, महादेवी वर्मा प्रभृति ने नारी को देवी, अप्सरा और माया रूपिणी से अलग मानवी रूप में साहित्यिक प्रतिष्ठा दी। जयशंकर प्रसाद ने

कामायनी में नारी को श्रद्धा रूप में महता दी। ध्रुवस्वामिनी में नारी के सशक्त रूप को समाज के समक्ष रखा। पंत ने भी 'मुक्त करो नारी को' कह कर स्त्री–मुक्ति का प्रस्ताव किया निराला ने तोड़ती पत्थर में उस को समाज के समक्ष रखा जो अपने कर्तव्य को अपना अस्तित्व मानती है बिना उफ् किये। साथ ही इस कविता में समाज के क्रूर मानसिकता को भी बखूबी दर्शाया।

महादेवी ने नारी मन से नारी हृदय को पढ़ा और साहित्य में उकेरा। उनकी 'श्रृंखला की कड़ियाँ' स्त्री सशक्तिकरण का सुंदर उदाहरण है। जिनमें नारी जागरण एवं मुक्ति के सवाल को बखूबी उठाया गया है। छायावादोत्तर काल में भी साहित्यकारों ने स्त्री–मुक्ति को केन्द्र बनाया।

राष्ट्रकवि 'रामधारी सिंह दिनकर' ने मानव जीवन के स्वस्थ विकास के लिए 'अर्धनारीश्वर' स्वरूप की कामना करते है।

'अर्धनारीश्वर' कल्पना इसलिए की पुरूषों के भीतर नारीत्व की ज्योति जगे और प्रत्येक नारी में पुरूषत्व का आधान हो, तभी हमारा समाज संतुलित स्वस्थ और समरस हो पाएगा।

पुरूष प्रधान समाज में नारी–स्थिति को दर्शाने के प्रयास काव्य कहानियों, उपन्यासों में बराबर होते रहे हैं, किन्तु इधर कुछ वर्षों से इसकी व्यापक चर्चा होने लगी है। समान वर्ग से संबंधित होने के कारण से रचनाकार स्वानुभूति के आधार पर नारी के मन को अधिक प्रमाणिक ढ़ंग से व्यक्त कर सकी हैं। उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, शिवानी, दीप्ति खंडेलवाल, मृदुलागर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, मणिका मोहिनी, कृष्णा सोबती, राजी सेठ, मंजुल भगत, नासिरा शर्मा, नमिता सिंह, सुधा अरोड़ा, प्रभृति नाम 7वें 8वें दशक में उभरे जिन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा संपूर्ण स्त्री समाज की दशाओं को साहित्य का विषय बनाते हुए, पाठक के समक्ष रखा।

स्त्री विमर्श के प्रारंभिक चरण में नारी दीन–हीन स्थिति का चित्रण करते हुए इन लेखिकाओं ने पुरूषों को दोषी ठहराया, किन्तु बाद मे इस प्रवृति का स्वयं विरोध भी किया।

कृष्णा सोबती की कई स्त्री विषयक रचनाओं में (सब में नहीं) बेबाकी के साथ–साथ अपराधबोध की महत्वपूर्ण भूमिका है।

चित्रा मुदगल ने अपने उपन्यास 'एक जमीन अपनी' में लिखा है "पुरूषों का विरोध करते हुए पुरूष की तरह निरंकुश और स्वच्छंद हो जाना नारी मुक्ति नहीं है।"

नारी विमर्श की अभिव्यक्ति का मूल स्वर नारियों के आर्थिक आत्म–निर्भरता एवं नारी–पुरूष की समानता के इर्द–गिर्द धूमता रहा है। आर्थिक स्वावलंबन के अभाव में नारी अपने परिवार में ही शोषित होती रही है, क्योंकि विरोध करने का ना तो उसमें साहस है ना ही संबल। नारी पुरूष के लिए समाज ने तो अलग–अलग प्रतिमान निर्धारित कर रखे हैं, उनका मुखर विरोध इन कथा साहित्यों में हुआ है। मैत्रेयी पुष्पा जी 'बेतवा बहती रही' में लिखती है– "विभिन्न मानसिकता के दुमुहे समाज में आज की नारी मात्र वस्तु, मात्र संपत्ति विनिमय की चीज है।"

इन लेखिकाओं ने मात्र भोग–विलास की वस्तु समझने वाली मानसिकता का मुखर विरोध किया है। इनके बाद कुछ पुरूष रचनाकारों ने भी इन लेखिकाओं की आवाज को साथ दिया है। जिनमें सुरेन्द्र वर्मा, केदारनाथ सिंह, दूधनाथ सिंह, राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, प्रभृति प्रमुख है। इन्होंने नारी मन के कोमल तंतुवों को पढ़कर अपनी रचनाओं में इसकी परिपुष्टि की है, जो नारी लेखिकाओं से भी अधिक प्रमाणिक और पुष्ट दिखती है।

हाल में कुछ वर्षों 2000 के बाद यह विमर्श आलोचना के केन्द्र में आया। इनमें कई लेखिकाओं ने स्वतंत्र रूप से इस विषय पर आलोचना लिखी, जिनमें प्रमुख हैं –"बाधाओं के वाबजूद नई औरत" (उषा महाजन) , "स्त्री – विमर्श : समाज और साहित्य" (क्षमा शर्मा) , "स्त्री सरोकार" (आभा रानी त्योरा) , "हम सभ्य औरते" (मनीशा), "स्वागत है बेटी"(विभा देव सरे), "औरत के लिए औरत" (नासिरा शर्मा), "हिन्दी साहित्य का इतिहास" (सुमन राजे) आदि।

इन रचनाओं में स्त्री के तमाम सामाजिक पारिवारिक संबंधों एवं योगदान के साथ–साथ उनकी अस्मिता की बात की गई है।

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि समाज के उज्जवल भविष्य की कामना के लिए हमें स्त्री के प्रति अपना दृष्टिकोण बदलना होगा। आज का युग नारी स्वतंतत्रा का युग है। आज महिलाएं हर क्षेत्र में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर रहीं हैं, साहित्य भी इससे अछूता नही है।

अंततः इतना कहना उचित होगा की स्त्री मुक्ति का मतलब है–स्त्रियों के आत्मनिर्णय का अधिकार, स्त्री को समाज में, घर–परिवार में समानता का अधिकार।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *मृदुला गर्ग : चित्त्कोबरा, 2017, राजकमल प्रकाशन , पृष्ठ – 168*
2. *मैत्रेयी पुष्पा : बेतवा बहती रही, पृष्ठ – 108 किताब घर, नई दिल्ली 2010*
3. *क्षमा शर्मा : स्त्रीत्ववादी विमर्श : समाज और साहित्य, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2002*
4. *आजकल : मार्च 2013, पृष्ठ – 24*
5. *आजकल : मार्च 2011, पृष्ठ – 25*
6. *पंचशील शोध – समीक्षा , पृष्ठ – 82*